यूक्लिड की एलीमेंट्स भारत कैसे आई?

रामकृष्ण भट्टाचार्य

जयपुर के सवाई जयसिंह (1688-1743) एक अनोखे किस्म के राजा थे। उनमें ज्ञान, खास तौर से खगोल शास्त्र के प्रति एक ललक थी। संस्कृत के खगोलीय ग्रंथों से संतुष्ट न होने के कारण उन्होंने फारसी, अरबी और यहां तक कि लैटिन पुस्तकों और खगोलीय मानचित्रों का रुख किया। सवाई जयसिंह ने ही दिल्ली, जयपुर, वाराणसी, उज्जैन व मथुरा में वेधशालाओं (जंतर-मंतर) की स्थापना की थी। ऐसी मुक्ताकाश वेधशालाएं दुनिया भर में अनोखी हैं।

इसके अलावा उन्होंने यूक्लिड की एलीमेंट्स, टोलेमी की सिन्टैक्सिस, समतल व गोलीय त्रिकोणमिति के कुछ ग्रंथों, लॉगरिद्म के निर्माण व उपयोग के बारे में नैपियर की रचनाओं तथा जॉन ड्रुआन का अनुवाद संस्कृत में करवाया था। यहां हम इनमें से पहली पुस्तक यानी एलीमेंट्स की बात करेंगे।

राजा जयसिंह के समय में भारत में एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जो संस्कृत और यूनानी दोनों भाषाओं में इतना दक्ष हो कि अनुवाद का काम कर सके। मगर एक बीच की भाषा उपलब्ध थी - अरबी। कई यूनानी वैज्ञानिक ग्रंथों का अनुवाद अरबी में हो चुका था। लिहाज़ा यूक्लिड व टोलेमी दोनों के अनुवाद अरबी अनुवादों से किए गए। ये अरबी अनुवाद नासिर-अद्दीन अल् तुसी ने किए थे। अल् तुसी एक फारसी खगोल शास्त्री थे (1201-74)। संस्कृत अनुवाद का काम सम्राट जगन्नाथ ने हाथ में लिया था, जिनके बारे में कहा जाता है कि वे एक तैलंग ब्राह्मण थे। बदकिस्मती से हम जगन्नाथ सम्राट के बारे में यह तक नहीं जानते कि वे कब पैदा हुए थे और कहां रहते थे। तैलंग शब्द भी भ्रामक है। इसका मतलब यह हो सकता है कि वे तेलंगाना के निवासी थे या यह भी हो सकता है कि वे दक्षिण भारत में कहीं से आए थे।

जब जयसिंह दक्कन गए थे, तब उन्होंने इस युवा को खोजा था। उस समय ही जगन्नाथ सम्राट कई शास्त्रों में पारंगत थे। औरंगज़ेब के मौलानाओं ने कभी उन्हें उलाहना दिया था कि "हम तो संस्कृत अच्छे से सीख सकते हैं, मगर आपके लोग फारसी और अरबी नहीं सीख पाएंगे।"

◀ सवाई जयसिंह और उनके द्वारा निर्मित दिल्ली का जंतर-मंतर ▼

जयसिंह सम्राट जगन्नाथ को अपने राज्य में ले आए और उन्हें अरबी सिखाने की व्यवस्था कर दी। जगन्नाथ एक होशियार युवक थे और उन्होंने जल्दी ही अरबी पर पकड़ बना ली और प्राचीन काल के दो प्रमुख ग्रंथों - टोलेमी की सिन्टैक्सिस और यूक्लिड की स्टॉइखेना - का अनुवाद कर लिया। संस्कृत में इनके शीर्षक थे - क्रमशः सिद्धांत सार कौस्तूभा और रेखागणितम।

एक दंतकथा यह है कि औरंगज़ेब खुद इस युवक की प्रतिभा से इतना प्रभावित हुए थे कि उन्होंने जगन्नाथ को अपने दरबार में आमंत्रित किया था और जगन्नाथ ने इसका सकारात्मक उत्तर भी दिया था। जब सवाई जयसिंह ने उनसे जयपुर लौटने को कहा, तो बताते हैं कि उनका जवाब थाः "दिल्ली के बादशाह या दुनिया के बादशाह मेरी आकांक्षाएं पूरी कर सकते हैं, अन्य छोटे लोग तो मुझे इतना ही दे सकते हैं कि सब्ज़ी और नमक का इंतज़ाम हो पाएगा।" बहरहाल, वे जयपुर लौटे और सिद्धांत सम्राट नामक किताब लिखी। सिद्धांत सम्राट अरबी में जयसिंह द्वारा प्रकाशित पुस्तक ज़िया-ज़दीद-ए-मुहम्मद शाही का अनूदित व परिवर्धित संस्कृत संस्करण थी। इस पुस्तक में खगोल शास्त्रीय अवलोकनों का रिकॉर्ड था।

यहां प्रकाशन शब्द का उपयोग ज़रूर किया गया है, मगर गौरतलब है कि जयसिंह के ज़माने में जयपुर में कोई छापाखाना नहीं था। फिर भी अनुवाद पूरा होते ही रेखागणितम की कई प्रतियां तैयार की गई थीं। ऐसी कम से कम आठ प्रतियां देश के विभिन्न हिस्सों से प्राप्त हुई हैं। इनमें से सबसे पुरानी प्रति विक्रम संवत 1784 (1728 ईस्वीं) की है। यह प्रति वाराणसी के शासकीय संस्कृत कालेज में सुरक्षित रखी थी। कमलाशंकर प्राणशंकर त्रिवेदी ने उस समय इस विशाल रचना का संपादन करने का ज़िम्मा उठाया था। यह काम वे बॉम्बे संस्कृत सीरीज़ के तहत कर रहे थे। यह मात्र सौ साल पहले की बात है।

विद्वानों का ध्यान इस पांडुलिपि के अस्तित्व की ओर दिलाने का काम महामहोपाद्याय सुधाकर द्विवेदी ने अपनी संस्कृत रचना गणकतरंगिनी के माध्यम से किया था। यह रचना पुस्तक रूप में वाराणसी से 1892 में प्रकाशित हुई थी और उससे पहले पंडित नामक शोध पत्रिका में छप चुकी थी। मगर चूंकि यह रचना संस्कृत में छपी थी, इसलिए इसे ज़्यादा लोगों ने नहीं पढ़ा था।

बड़ौदा के सेशन्स जज हरिलाल हरषदराय ध्रुव ने रेखागणितम के बारे में एक पर्चा 1889 में स्टॉकहोम व क्रिस्टियाना में हुए प्राच्यविदों के अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में पढ़ा था। वे इस सम्मेलन में बड़ौदा के गायकवाड़ के पंडित प्रतिनिधि के रूप में शामिल हुए थे। ध्रुव ने इस रचना का संपादन करने की योजना बनाई थी मगर उनकी अचानक मृत्यु की वजह से यह काम न हो सका।

इसके बाद यह काम के.पी. त्रिवेदी ने उठाया। उन्होंने काश्मीर की रॉयल सोसायटी लायब्रेरी से लेकर त्रिवेंद्रम के महाराजा संस्कृत कालेज तक से पांडुलिपियां एकत्रित की थीं और अंततः वे इस पुस्तक को दो खंडों में 1901 व 1902 में प्रकाशित कर पाए। इसकी मात्र 300 प्रतियां छापी गई थीं, और उसके बाद कभी नहीं छापी गई।

भारत में ज्यामिति को कभी भी अध्ययन का स्वतंत्र विषय नहीं माना गया। भारत में ज्यामिति की उत्पत्ति शुल्ब सूत्र से हुई है। शुल्ब सूत्रों में यजुर्वेद संहिताओं और यजुर्वेद से सम्बंधित ब्राह्मणों में दिए गए नियमों के अनुसार हवन के लिए अग्नि, चिति या वेदियां बनाने के तरीके दिए गए हैं। भक्ति पंथ के उदय और महंगे यज्ञ करने की प्रथा के ह्रास के साथ ही शूल्ब सूत्रों से सम्बंधित ज्यामिति भी दरकिनार हो गई।

भारत में ज्यामिति का पुनर्जन्म खगोल शास्त्र की सखी के रूप में हुआ। मगर चीन की तरह भारत में भी यूक्लिडियन ज्यामिति का बुनियादी पैटर्न अनजाना था। यहां ज्यामिति को कभी भी प्रयुक्त तर्क की एक प्रणाली के रूप में नहीं देखा गया, जिसमें आप कुछ मूलभूत मान्यताओं (एक्सियम्स) और पॉस्टुलेट्स से शुरू करते हैं और उनके आधार पर कई सारी प्रमेय तैयार करते हैं और उन्हें मात्र एक्सियम्स और पॉस्टुलेट्स के आधार पर सिद्ध करते हैं।

एलेक्ज़ेंड्रिया के यूक्लिड (330-275 ईसा पूर्व) ज्यामिति के जनक नहीं थे मगर एलीमेंट्स ऑफ जियॉमेट्री नामक उनका ग्रंथ इस विषय का प्रामाणिक व मानक ग्रंथ माना जाने लगा था। इसका अनुवाद कई भाषाओं में हुआ था। इसके बाद की 22 सदियों में एलीमेंट्स के अंश, खास तौर से 13 पुस्तकों की इस ृंखला के प्रथम 6 खंड, ज्यामिति का मूलभूत परिचय बने रहे। यह सही है कि आज स्कूलों में इस रचना को त्याग दिया गया है मगर ज्यामिति सिखाने के नए तरीके भी यूक्लिड के तरीकों पर ही आधारित हैं।

अरब लोगों को यह रचना बहुत भाई। एलीमेंट्स का अरबी में अनुवाद सबसे पहले अल् हज्जाज इब्न युसूफ इब्न मतार (786-833) और सैयद अद् दिमिस्की ने किया था। इसे बाद में कुस्ता इब्न लूका ने 912-13 में संशोधित किया। अल् अब्बास ने इस रचना पर टीका लिखी थी।

एलीमेंट्स का प्रथम संपूर्ण लैटिन अनुवाद एडिलार्ड ऑफ बाथ (लगभग 1090-1150) ने किया था। यह अनुवाद मूल यूनानी ग्रंथ से नहीं बल्कि अरबी अनुवाद से किया गया था। अल् हज्जाज की रचना के पहले खंड का शीर्षक उनके संरक्षक हारुन अल् रशीद के सम्मान में हारुनी और दूसरे खंड का नाम उनके दूसरे संरक्षक खलीफा मैमून अल् रशीद (हारुन अल् रशीद के पुत्र) के सम्मान में मैमूनी रखा गया था।

एलीमेंट्स का एक और अरबी अनुवाद हुनैन इब्न इशाक (808-873) ने किया था। इस अनुवाद पर टीका ताबित बिन उर्रा हेरानी ने नौवीं सदी में लिखी थी। बताते हैं कि अल् बेरुनी (973-1048) ने अल्माजेस्ट व एलीमेंट्स, दोनों का संस्कृत अनुवाद किया था मगर इसकी कोई प्रति हमें नहीं मिली है।

अलबत्ता सम्राट जगन्नाथ ने 1718 ईस्वीं में अपनी रेखागणितम की रचना एलीमेंट्स के इनमें से किसी अनुवाद के आधार पर नहीं की थी बल्कि नासिर अद्दीन अल् तुसी (1201-74) के अनुवाद के आधार पर की थी। यह अरबी संस्करण पूरी दुनिया में ज़्यादा मशहूर था। इसे मेडिसिस की एक प्रेस में 1594 में छापा गया था।

कैरिन्थिया के हर्मैन ने एलीमेंट्स का लैटिन अनुवाद अल् हज्जाज के अरबी संस्करण के आधार पर किया था जबकि क्रेमोना के जोरार्ड (1114-87) ने इशाक के संस्करण के आधार पर किया था। पहला मुद्रित अनुवाद नेवारा के जोहानेस कैम्पेनस (1220-96) द्वारा किया गया था।

अंग्रेज़ी में एलीमेंट्स का अनुवाद सबसे पहले 1570 में एच. बिलिंगस्टे ने किया था। ग्रेगरी ने यूक्लिड को यूनानी व लैटिन में 1703 में छापा। सम्राट जगन्नाथ की रचना इन सबसे काफी बाद में आई थी मगर भारत में यूक्लिडियन ज्यामिति के अध्ययन में इसका ऐतिहासिक महत्व है।

रोचक बात यह है कि जगन्नाथ यह बात कभी उजागर नहीं करते कि उनकी रेखागणितम एक अनुवाद-रचना है। इसकी बजाय रचना की शुरुआत में ही वे काफी दबंग दावा करते हैं कि "यह शिल्प शास्त्र है जो ब्रह्मा ने विश्वकर्मा को बताया था। यह एक लंबी परंपरा के अंतर्गत धरती पर अवतरित हुआ है। अब वह तो गुम हो चुका है। मैंने महान राजा जयसिंह के आदेश पर, खगोल शास्त्रियों के आनंद के लिए, इसे फिर से विस्तार में खोज निकाला है।"

त्रिवेदी कहते हैं, "इन पद्यों को पढ़कर पाठक दो में से एक निष्कर्ष पर पहुंचेंगे कि या तो यह मौलिक कृति है या लेखक चोर है।" दोनों ही निष्कर्ष प्रशंसासूचक नहीं होंगे। लिहाज़ा त्रिवेदी का सुझाव है कि "एकमात्र समाधान यह है कि हम जानते हैं कि लेखक मानता था कि ज्यामिति का विज्ञान (शिल्प शास्त्र) सबसे पहले भारत में विकसित हुआ था और फिर यूनान व अन्य देशों में प्रसारित हुआ था, और स्वयं लेखक के काल में पूरी तरह गुम हो चुका था, इसलिए उसने इसे एक दैवी उत्पत्ति प्रदान की ताकि लोगों को इसका सम्मान करने को प्रेरित कर सके।"

दूसरी ओर टोलेमी की पुस्तक अल्माजेस्ट के अनुवाद में जगन्नाथ स्पष्ट कहते हैं कि यह अरबी से अनुवाद है जिसे वे संस्कृत में व्यक्त कर रहे हैं ताकि खगोल शास्त्री

समझ सकें।

एक और रोचक बात यह है कि जगन्नाथ शुल्ब सूत्रों में संग्रहित ज्यामितीय ज्ञान की परंपरा का उल्लेख नहीं करते। इसके विपरीत वे यूक्लिडियन ज्यामिति का सम्बंध वास्तु शास्त्र के ग्रंथों से जोड़ते हैं, जो उतने पुराने नहीं हैं। इसके दो कारण हो सकते हैं -

1. जगन्नाथ आसानी से देख सकते थे कि शुल्ब सूत्र और यूक्लिड की ज्यामिति में बहुत बड़ी खाई है। या
2. वे यह गलत छवि प्रस्तुत नहीं करना चाहते थे कि यूक्लिडियन ज्यामिति का वैदिक कर्मकांड से कोई सम्बंध है। वे इस विषय को पूरी तरह धर्म से पृथक रखना चाहते थे और इसका सम्बंध ईश्वर से नहीं, बल्कि इंसानों के लिए भवन निर्माण वगैरह से जोड़ना चाहते थे।

सम्राट जगन्नाथ द्वारा प्रयुक्त ज्यामितीय शब्द

पॉइन्ट	बिंदु
लाइन	रेखा
सुपरफाइसेस	धरातल-क्षेत्र
सर्किल	वृत्त
ट्रायएंगल	त्रिभुज
एंगल	कोण
एक्सियम/पॉस्टुलेट/डेफिनिशन	परिभाषा
नंबर	अंक
युनिट	रूप
रेश्यो	निस्पति
पार्ट्स	यावदंश
सॉलिड फिगर	घनक्षेत्र
पिरामिड	सूचीफलक घनक्षेत्र
कोन	शंकु
सिलेंडर	समतलमस्तक (परिधिरूप) शंकु घनक्षेत्र
प्रिज़्म	छेदित घनक्षेत्र
स्फीयर	गोलक्षेत्र
टेट्राहेड्रन	चतुष्फलक शंकु

प्रमेय को क्षेत्र कहा जाता है।

कारण जो भी रहे हों, आप इस बात पर दांतों तले उंगली दबा लेंगे कि उन्होंने उन शब्दों के लिए किन पर्यायवाची शब्दों का उपयोग किया है जो ज्योतिष शास्त्र में नहीं होते थे। कुछ उदाहरण तालिका में देखिए।

यूक्लिड की पुस्तक क्रमांक 1 में पहली प्रमेय इस प्रकार हैः “किसी दी गई निश्चित सरल रेखा पर समत्रिबाहु त्रिभुज बनाना है।

[illegible], अंग्रेज़ी में AB) से दर्शाया जाता है और शीर्ष को गामा से (γ, अंग्रेज़ी में C से)। इसके अरबी अनुवादक अल् तुसी ने इसके लिए अरबी वर्णमाला के क्रम का उपयोग नहीं किया है। अलिफ, बे के बाद ते नहीं आता बल्कि वे लिखते हैं अलिफ, बे, जिम। जगन्नाथ नतमस्तक होकर इस परंपरा का पालन करते हुए ब, ज लिखते हैं (अ, आ इ, ई या क, ख, ग नहीं।) जो इंसान इतने नए शब्द गढ़ने की क्षमता रखता हो, उसने ऐसा क्यों किया, यह एक पहेली है।

आइए अब यूक्लिड के प्रमेय I.47 पर चलते हैं। यह तथाकथित पायथागोरस प्रमेय है। यूक्लिड ने इसका मात्र एक प्रमाण दिया है, मगर अल् तुसी के नक्शे कदम पर चलते हुए जगन्नाथ ने पूरे सत्रह प्रमाण प्रस्तुत किए हैं।

मगर यह कोई अपवाद नहीं है। अल् तुसी और जगन्नाथ दोनों ही कई प्रमेयों के एकाधिक वैकल्पिक प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। जैसे I.9 (एक समकोण को दो बराबर भागों में विभाजित करना), II.8 (यह सिद्ध करना कि किसी भी त्रिभुज की बड़ी भुजा के सामने वाला कोण बड़ा होता है) वगैरह।

जैसा कि ऊपर कहा गया था, रेखागणितम की

पांडुलिपि की प्रतियां बनाकर भारत के अलग-अलग भागों में - अक्षरशः काश्मीर से केरल तक - भेजी गई थीं। मगर ये प्रतियां पुथीशालाओं में बेकार पड़ी रहीं। टीका या भाष्य लिखने की बात तो दूर, किसी ने इन्हें पढ़ने की तकलीफ भी नहीं उठाई। फारसी से खगोल शास्त्र के अन्य ग्रंथों का अनुवाद नयनसुख उपाध्याय ने किया था। जैसे हयात, उकरा, और एस्ट्रोलेब के निर्माण के बारे में एक बहुत रोचक किताब थी जिसका नाम था यंत्रज-विचार-विंसाध्यायी। ये सब भी अनपढ़ी पड़ी रहीं। जगन्नाथ और नयनसुख, दोनों ही सवाई जयसिंह के दरबार से सम्बद्ध थे। मगर जैसा कि कर्नल टॉड ने बहुत स्प्ष्ट कहा है, "1743 में राजा की मृत्यु के साथ उनकी पत्नियां, उप-पत्नियां और विज्ञान भी उनके साथ उनकी चिता में स्वर्ग सिधार गए।" ***(स्रोत फीचर्स)***